संपादकीय

शिक्षा की गुणवत्ता

सीखना, उपलब्धि और मापन

शिक्षा की गुणवत्ता की बहस में बहुत से विवादित आयामों में एक सीखना, उपलब्धि और मापन के बीच संबंध है। शिक्षा की गुणवत्ता की सामयिक बहस मूलतः इसी समस्या पर केन्द्रित है। इस समस्या पर विचार करने के लिए कुछ सवालों पर विचार किया जाना आवश्यक है कि, सीखने के क्या मायने है ? क्या सीखने में उपलब्धि हासिल करना भी शामिल है ? यदि सीखने की प्रक्रिया में कुछ उपलब्धि हासिल हुई है तो क्या उसे मापा जा सकता है और यदि हां, तो किस तरह ?

शिक्षा का अपरिहार्य संबंध सीखने से है। शायद ही कोई यह कहेगा कि व्यक्ति की शिक्षा तो हो रही है लेकिन उसका सीखना नहीं हो रहा है। यानी, तार्किक रूप से शिक्षा होने का अनिवार्य परिणाम सीखना है। सीखने को किसी भी तरह से परिभाषित किया जाए लेकिन उसमें सीखने वाले या शिक्षार्थी को जो पहले से नहीं आता उसे अर्जित करना या जानना शामिल होता है। उदाहरण के लिए, यदि हम किसी बच्चे के बारे में कहें कि वह पढ़ना या गुणा करना अथवा तैरना सीख रहा है तो इसका मतलब ही है कि उसे वह पहले से नहीं आता और यदि उसे वह पहले से आता है तो यहां सीखना शब्द का प्रयोग निरर्थक होगा। सीखने में ज्ञान, समझ, मूल्य, मनोवृत्तियां या रुचि-रुझान इत्यादि को शामिल किया जा सकता है। इस मायने में सीखने का उपलब्धि के साथ सहज तार्किक संबंध बनता नजर आता है। अर्थात्, यदि सीखने की प्रक्रिया के परिणाम के तौर पर उपलब्धि हासिल नहीं हो रही है तो उसे सीखना कहने में समस्या होगी। यदि कोई शिक्षक किसी बच्चे को गुणा सिखाता रहे और अन्ततः वह गुणा नहीं सीखे तो बिना उपलब्धि के इसे सीखना कहने में समस्या होगी। अतः सीखने और उपलब्धि के मध्य भी स्पष्ट संबंध बनता है। तीसरी समस्या मापन की है कि शिक्षा प्रक्रिया के तहत जो कुछ भी सीखा गया है, क्या उसका मापन संभव है ? इस सवाल का सीधे-सीधे जवाब देने में थोड़ी समस्या महसूस होती है।

पहली समस्या तो यह है कि यदि सीखने की प्रक्रिया से किसी भी तरह की उपलब्धि हासिल हुई है तो उसका पता लगाने के लिए किसी तरह के मापदण्ड तो होने चाहिएं या उसका मापन संभव होना चाहिए। अन्यथा हमें कैसे पता चला कि कुछ उपलब्धि हासिल हुई है या सीखा है। सामान्य रूप से शिक्षा के क्षेत्र में यह एक भ्रांति पैदा करने वाली समस्या है कि यदि शिक्षार्थी को किसी तरह की उपलब्धि हासिल हुई है तो इसका अर्थ ही मापन योग्य होना है। यदि सीखने, उपलब्धि और मापन के संबंध को व्यवहारवादी नजरिए से देखा जाए तो इनमें एक तरह की संगति नजर आ सकती है। अर्थात् सीखने की प्रक्रिया में व्यक्ति के व्यवहार में आने वाले परिवर्तन को उपलब्धि के तौर पर देखा जा सकता है और व्यवहारगत परिवर्तनों को मापा जा सकता है। सावधानी के लिए इस बहस में 'उपलब्धि का पता लगा पाने' और 'मापन योग्य होने' के अवधारणात्मक फर्क पर ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है। मापन में सामान्यतया उपलब्धि को जानने के लिए वस्तुनिष्ठ मापदण्डों की बात की जाती है जिनके आधार पर उसे मापा जा सकता है और यदि इन मापदण्डों को लेकर कोई भी व्यक्ति उपलब्धि का पता लगाना चाहे तो परिणाम लगभग एक जैसे ही होंगे। जबकि उपलब्धि का पता लगा पाने में यह संभव है कि शिक्षक विभिन्न तरीकों से यह पता लगाने का प्रयास करे कि बच्चे ने क्या जाना-सीखा है। इसके लिए कुछ मापदण्ड वस्तुनिष्ठ हो सकते हैं तो कुछ में शिक्षक का अन्दाजा, अनुमान और अन्तः प्रज्ञा या लम्बे समय तक बच्चों के साथ अन्तःक्रिया से बनी समझ भी शामिल हो सकती है। और संभव है कि इन्हें बता पाने के लिए शिक्षक के पास कोई सुस्पष्ट मापदण्ड नहीं हों। लेकिन यह संभव है कि शिक्षक बच्चों के साथ लम्बे समय की अन्तःक्रिया के बाद बच्चे की समझ, व्यवहार, आदतों, रुचि-रुझानों एवं गुणों में कुछ इस तरह के परिवर्तनों को दर्ज करे जिन्हें उसके द्वारा मापनीय आधारों पर प्रस्तुत कर पाना संभव नहीं हो।

उपलब्धि को मापन से संबद्ध करने के प्रयास में दूसरी समस्या इस वजह से पैदा होती है कि आखिर शिक्षा के जरिए हम व्यक्ति को क्या सिखाना चाहते हैं। अर्थात् यह समस्या शिक्षा के उद्देश्यों से संबंधित है। शिक्षा के क्षेत्र में सीखना-सिखाना सुविचारित और किसी उद्देश्य से अभिप्रेत होती है। शिक्षा प्रक्रियाओं में सीखने और बच्चे के सामाजीकरण की प्रक्रिया में सीखने के फर्क को इसी नजरिए से अलगाकर समझा जा सकता है। यदि शिक्षा का उद्देश्य सिर्फ गणित के जोड़-बाकी, पढ़ना-लिखना या कुछ प्रयोग कर पाना भर सिखाना है तो संभवतः शिक्षा में उपलब्धियों के मापन योग्य होने से किसी तरह की समस्या उत्पन्न नहीं होगी। लेकिन यदि शिक्षा का उद्देश्य बच्चों में आलोचनात्मक चिन्तन, सौन्दर्य बोध, कल्पनाशीलता, संवेदनशीलता का विकास करना है या जैसा कि रोहित धनकर अपने लेख में कहते हैं कि 'स्कूल में सीखना विषयवस्तु को सीखना भर नहीं है। दुनिया को, लोगों को और अपने-आपको देखने का नजरिया क्या हो, यह भी सीखना है।... मनुष्य सीखने के साथ-साथ सीखा कैसे जाता है, यह भी सीख जाता है और व्यवस्थित करना और सीखे हुए को कैसे प्रयोग करना है, यह भी सीखता है'। यदि हम शिक्षा के उद्देश्यों को उपरोक्त अर्थों में परिभाषित करें तो फिर शिक्षा में मापन की गंभीर सीमाएं नजर आने लगती हैं।

अब समस्या आती है कि, यदि शिक्षा से सीखना अपरिहार्य रूप से जुड़ा हुआ है तो फिर यह कैसे पता लगाएं कि शिक्षार्थी ने कुछ सीखा है ? जहां तक बच्चे के सीखने का पता लगाने का सवाल है तो सीखने के बहुत से क्षेत्र ऐसे हो सकते हैं जिन्हें मापा जा सकता हो। उदाहरण के लिए, बच्चे ने किसी पाठ को पढ़कर ग्रहण किया है अथवा नहीं, इसे एक हद तक मापा जा सकता है। इसके मापन के लिए वस्तुनिष्ठ किस्म के अभ्यास बनाए जा सकते हैं। लेकिन शिक्षा की संपूर्ण अवधारणा को मापनीय मापदण्डों तक सीमित कर देने से समस्या खड़ी हो जाती है। पहली समस्या तो यह है कि शिक्षा में मापन का आग्रह शिक्षा के विस्तृत दायरे को बहुत ही संकीर्ण बना देता है। उदाहरण के लिए, बच्चे का सौन्दर्यबोध का विकास। किन मापदण्डों के आधार पर इसका वस्तुनिष्ठ तरीके से पता लगाया जा सकता है कि बच्चे के सौन्दर्य बोध का विकास हुआ है अथवा नहीं या रचनात्मक अथवा आलोचनात्मक चिन्तन को किन मापदण्डों की कसौटी पर जाना जा सकता है ? इसकी दूसरी समस्या यह है कि इसमें मानवीय सीखने को बहुत ही संकुचित अर्थ में समझने का प्रयास किया जाता है। हम सभी जानते हैं कि मानवीय सीखना रैखिक तरीके से नहीं चलता। यानी, इंसानी सीखने की प्रक्रिया सीधे सरल तरीके से नहीं चलती बल्कि उसमें बहुत से उतार-चढ़ाव होते हैं और अनेक बार सीखने के अगले स्तरों पर पिछले स्तरों की ज्यादा बेहतर समझ बनती दिखाई देती है। साहित्य के उदाहरण से इसे बेहतर तरीके से समझा जा सकता है। किसी कहानी, कविता या उपन्यास की समझ एक समयान्तराल के बाद वही नहीं रहती जो पहले थी। इंसान के सीखने की इस प्रकृति के चलते इसके साथ मापने का आग्रह न्यायसंगत नहीं बैठता।

शिक्षा में उपलब्धियों के मापन ने एक अन्य समस्या को भी जन्म दिया है और यह, शिक्षा की संपूर्ण प्रक्रियाओं को मापन योग्य विषयवस्तु के इर्द-गिर्द सीमित कर देने की है। परिणामस्वरूप, जिस विषयवस्तु का मापन संभव है, धीरे-धीरे वही शिक्षा में प्रमुख स्थान ग्रहण करने लगती है। इसके चलते बहुत से विषय जो व्यक्ति के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, उन्हें दरकिनार कर दिया जाता है। इस समस्या को समझने के लिए बहुत दूर जाने की जरूरत नहीं है। हमारी शिक्षा व्यवस्था में विभिन्न कलाओं, हस्तकार्यों और साहित्य के प्रति उपेक्षा भाव इसी नजरिए का परिणाम है और बच्चों की उपलब्धियों को मापने के लिए आयोजित होने वाली परीक्षाओं तथा उनमें पूछे जाने वाले सवालों की प्रकृति को इसके परिणाम के तौर पर देखा जा सकता है। बच्चों से सामान्यतया कल्पनात्मक सवाल इसीलिए नहीं पूछे जाते क्योंकि इन्हें मापने में अनेक तरह की समस्याएं महसूस होती हैं।

इस बहस की एक समस्या यह भी कि यदि शिक्षा में मापन की इतनी समस्याएं हैं तो फिर शिक्षा व्यवस्था में इसे इतनी प्रमुखता क्यों दी जाती है ? दरअसल, उपलब्धियों के मापन की समस्या को समाजशास्त्रियों और शिक्षाविदों ने श्रम-बाजार की जरूरतों के लिए श्रम-शक्ति की उपलब्धता से जोड़कर देखा है। क्रिस्टोफर विंच अपने लेख में इसे अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर 'श्रम-बाजार में श्रम-शक्ति की गुणवत्ता की पारदर्शी जानकारियों' के रूप में भी देखते हैं ताकि भूमण्डलीकरण के दौर में श्रम-शक्ति को आवश्यकता के अनुसार प्राप्त करने में किसी तरह की समस्या न हो। संभव हो, इस मापन के आग्रह में बेहतर प्रबंधन, कुशल एवं अनुशासित कार्मिक इत्यादि तो मिल जाएं लेकिन समाज के लिए अच्छे इंसानों की निर्मिति में समस्या जरूर होगी। ◆